

# UTTARAKHAND AYURVED UNIVERSITY



GURUKUL CAMPUS HARIDWAR

DEPARTMENT OF KRIYA SHARIR

TOPIC -

अग्नि

DIRECTED BY:

DR. VIPIN PANDEY

(H.O.D)

DR. B. K. PANWAR

(ASSOCIATE PROFESSOR)

SUBMITTED BY:

APRORVA BHAKUNI  
(17010005)

B.A.M.S. 1<sup>ST</sup> YEAR

PROFESSIONAL BATCH

## अग्नि

# व्युत्पत्ति (Definition)

“अंगति व्याप्नोति इति अग्निः।”

अर्थात् सर्वत्र व्यापत होने वाला पदार्थ या प्रगतिशील वास्तु ।

• अग्नि का महत्व (Importance of agni)

“आयुर्वर्णबलं स्वास्थ्यमुत्साहोपचर्यो प्रभा ।

ओजस्तेजोऽग्नयः प्राणाश्चोक्त देहाग्निहेतुकाः ॥” (च.चि. 15 3)

मनुष्य के शरीर कि आयु , बल , वर्ण , सवस्थये , उत्साह शरीर , कि वृद्धि , काँटी , ओज तेज , अग्नि और प्राण ये सब देह को अग्नि पर निर्भर है ।

यदि यह अग्नि शांत हो जाये तो मनुष्ये कि मृत्यु हो जाती है

“बलमारोग्यमायुश्च प्राणश्चागौ प्रतिष्ठिता”। (च.सू. 27 342)

देह का बल , आरोग्य , आयु और प्राण ये सभी अग्नि के अधीनहोते है ।

- सभी दोषो कि भांति और प्रकोप अग्नि के निर्भर हैं ।

इसलिए जटराग्नि कि रक्षा सर्वदा करनी किये

और प्रकोप का जो भी कारण हो उसे त्याग देना चाहिये।

-प्रत्येक पुरुष कि प्रकृति <sup>भिन्न</sup> भीन् होती उसकी प्रकृति के अनुसार अग्निया भी भिन्न भिन्न होती है

आहार कि मात्रा अपनी प्रकृति एवं अग्नि के अनुसार निर्धारित करनी चाहिए ।

आहार पाचन में भी अग्नि का महत्व है ।

• पर्याय

अग्नि के निम्न पर्याय है:-

सर्वपाक - इसके द्वारा समस्त िसपुल , सूक्ष्म द्रवियों को पचाये जाने का संकेत मिलता है ।

तनूनपतन - तन न आपात अर्थात् जब तक यह देह के भीतर रहता है , तब तक देह का पतन नहीं होता ।

अमीवाचतन - रोगो का नाशक होने से अग्नि को ामीवाचतन नाम दिया गया है ।

दमुनास - रोग नाशक शक्ति

शुचि - शोधन अग्नि

वैश्वानर - यह अग्नि प्राण , अपना , सामान के सहकारो में चारो

प्रकार के आहार को पचने कि क्रिया को सम्पन्न करता है ।

इसके अतिरिक्त रुद्र , महादेव , शव , पशुपति , मन , ईशान , आग्रह अशनि अदि पर्याय है ।

• अग्नि स्थान

“ जाठरो भगवानाग्निरीशन्नस्य पाचकः ।

सौक्ष्मयाद् रसादाददनो विवेक्तुं नैव शक्यते ॥ (सु.सू 35/27)

इनमे जठर (उदार) प्रदेश में िस्तिथ होने से जठराग्नि एवं आहार का पाचन करने के कारण कायाग्नि है , पावकग्नि ही

सभी अग्नियों कि पोषक होने से सब अग्नियों में प्रधान कही गयी है ।

“षष्ठी पित्तधरा-पाकार्यमिति शेषः” (इन्द्रहण)

“षष्ठी पित्तधरानाम-शोषयति पचाति” (अ.सं.शा)

छठी पित्तधरा कला ग्रहणी है । पित्तधारकला अमाशय तथा पक्वाशय के मध्य में स्थित है - यह अमाशय से पक्वाशय कि और जानेवाले अन्नपात्र को पच्यमानशीय ( ग्रहणी ) में रोक कर पित के तेज से उसका पाचन कर तथा पचने पर रुके हुए रस का अवशोषण करती है ।

#### • अग्नि के कार्य

“यदनं ..... रसादयः” (अ.ह.शा)

“अग्निरेव ..... दान्दानीति” (च.सू. 12)

“अन्नस्य ..... ह्युर्बलास्तिथः” (च.चि. 36 39)

“षष्ठी पित्तधरा ..... धारयति” (सु.शा 4 18)

“आयुवर्णो ..... देहर्गल हेतुका” (च.चि 15 3)

-अग्नि का मुख्य कार्य दहन , पाक ( खड़े हुए को पचना ) है ।

- रसयुक्त आहार को अन्नपाक में तथा अन्नरस को रसादि धातुओं एवं मालो में बदलना ;

-शरीर का च्येपचे १३ अग्नियों के आश्रित है ।

-पाचकाग्नि की वृद्धि होने पर शेष १२ अग्नियों की वृद्धि होती है और संस्कृत की और नष्ट होने पर शेष अग्नियों का नाश हो जाता है

अतः भलीभांति अन्न एवं पनसरूप इंधन से जठराग्नि की रक्षा करे ।

• अग्नियों की संख्या एवं भेद

चक्रपाणि ने अग्नि के १३ भेद बातये हैं-

१ जठराग्नि    ५ भूताग्नि    ७ धातुवाग्नि

अष्टांग हृदय में अग्नि के २३ भेद बातये हैं-

५ पिताग्नि    ५ भूताग्नि    ७ धातुवाग्नि

३ दोषाग्नि    ३ मालाग्नि

सुश्रुत ने पित को ही अग्नि    ५ पिताग्नियाँ बतिए हैं इसके अतिरिक्त ५ भूताग्नि बताई हैं ।

अरुणदत्त ने सात्सो सो सिराओं में रहने वाली अग्नि , ५०० पेशियों में रही वाली अग्नि को भूताग्नि के अन्तर्गत मना है ।

मुख्यतः चक्रपाणि द्वारा वर्णित अग्नियों के भेद की व्याख्या की जाती है

१, जठराग्नि    २ भूताग्नि    ३ धातुवाग्नि

“इति भौतिक धातुवत्प्रपक्त्वार्णं कर्म भाषितम्।”(च.चि 15 38)

इस प्रकार भौतिक ५ अग्नि , धातुगत ७ अग्नि और अन्न को पचने वाली पाचक अग्निका कर्म बताया गया है

\* जठराग्नि / कायाग्नि / पाचकाग्नि

- जठर प्रदेश ीिस्तिथ होने पर इसको जठराग्नि भी कहते हैं ।

आहार पाचन इसी अग्नि द्वारा होता है इसलिए सभी अग्नियों में इसकी प्रमुखता है ।

जठराग्नि की क्रिया के उपरांत की आहार द्रव्ये शोषण योग्य होते हैं । जिससे जठराग्नि द्वारा परिवर्तित आहार रास पर भूताग्नि कार्य कर सके ।

- यह पक्वाशय और अमाशय के मध्य या नाभि प्रदेश में रहता है तथा चतुर्वृद्धि अन्न को पचता है तथा इससे शरीर धातुओं द्वारा ग्रहण योग्य स्वरूप परिणित करता है और इसके पश्चात् पक्वाश उत्पन्न हुए दोष , रस , मूत्र , और पुरीष का पृथकरण करता है तथा ानिये अग्नियों को बल प्रदान करता है

इसकी वर्धि होने से ानिये अग्नि के करियो में भी वृद्धि होती है और श्रेय होने से क्षय हो जाते हैं

महर्षि ऋशुत के अनुसार जठराग्नि ईश्वर रूप है क्योंकि ये रासो को रासयनिक परिवर्तनों द्वारा नित्य रूप में परवर्तित करती है

वगभट्ट ने कहा है तेजस गुण की सामंता से सभी अग्नि सामान होते वे भी अग्नि का प्रमुख स्थान जठर प्रदेश है ।

आचार्य शङ्खधर - के अनुसार अग्नि को धारण करने वाली अग्निधरकला आन्त्र में स्थित होती है।

\* जाठराग्नि का महत्त्व जाठराग्नि के कार्य

- जाठराग्नि प्राकृत कर्मों में चारों प्रकार के पदार्थों (भक्ष्य, लेह, भोज्य, पेय) को पचाता है।  
आहार पाक के साथ-साथ मल पाक कर्म भी समान्न करता है।  
मल के पश्चात् मलाशय से होते हुए गद मार्ग से यथा समय त्याग दिया जाता है।
- जाठराग्नि धातु पाक जिसे धात्वाग्नि पाक कहते हैं वह भी समान्न करता है।
- धात्वाग्नि की मन्दता धातु सवर्धन और तीव्रता धातु हास करती है।
- पाचकाग्नि का महत्त्वपूर्ण कार्य यह भी है कि वह सार और किट्ट का विभाजन अर्थात् पृथक्करण करती है। महास्त्रोतस में जब आहार के पार्थिव आदि भागों की पातन होती है और पार्थिव आदि भाग विभिन्न समयों में पचते हैं। पचने के बाद अवशोषित करते हुए सार भाग को तथा को महास्त्रोतस में ही दोड़ देती है।
- पाचकाग्नि शेष अग्नियों को अनुग्रह या सहायता प्रदान करता है।
- पाचकाग्नि अपने तेज से और अग्नियों को बचान कर देती है।



### • पाचकग्नि के भेद

आहार पाचन के बल पर आचार्य चरक ने पाचकग्नि के चार भेद बताए हैं।

तीक्ष्ण अग्नि - यह अग्नि अपथ्य को सहन कर लेती है। अर्थात् बार-बार किये जाए भोजन का शीघ्र पाक कर लेती है।

तीक्ष्णाग्नि पित्त प्रकृति वाले मनुष्य में पाई जाती है।

मन्दाग्नि - जिस अग्नि में भुक्त आहार द्रव्य भी दीर्घकाल में पाचित होते हैं।

विषमाग्नि - जिस आग्नि द्वारा पाक ठीक होता हो और कभी-कभी पाचन ठीक न होकर शूल उदर में भारपन आदि उत्पन्न होता है।

इसमें वातदोष की अधिकता होती है।

समाग्नि - जो अग्नि समय में किए जाए भोजन का सम्यक् रूप से पाचन करती है।

यह अग्नि वात- पित्त -कफ प्रकृति (अथवा सम प्रकृति पुरुष) में होती है।

### जठराग्नि के स्थान

सूरक के अनुसार जठराग्नि का अधिष्ठान घ्रणि है जो नाभि के ऊपर स्थित है।

भूत के अनुसार अमाशय - पक्वाशय के मध्ये में रहने वाली घ्रणि अग्नि का अधिष्ठान है तथा पतधारकला भी अग्नि का अधिष्ठान है।

### भूताग्नि

- पांच महा भूत से निर्मित द्रव्यों ने अवस्थित होती है अर्थात् भौतिक द्रव्यों ने समाविष्ट अग्निको "भूताग्नि" संज्ञा प्रधान की गई है।
- आहार द्रव्य पांच भौतिक होती है और जठराग्नि से पाक के उपरान्त निर्मित आहार रास भी पांच भौतिक होता है। इस पांच भौतिक आहार रास पर भूताग्नि पाक होता है।
- भूताग्नि की संख्या पांच होती है -  
पार्थिवाग्नि, आप्याग्नि, तेजसाग्नि, वायाग्नि, आकाशग्नि।  
यह अग्नि पांच भौतिक द्रव्यों में उपस्थित रहती है परन्तु निष्क्रिय अवस्था में रहती है।  
जैसे तेजस अंश तेजसाग्नि में, पार्थिव अंश पार्थी अग्नि में, अपयश में अप्याग्नि, द्रविये में विवाग्नि रहती है।

ये उपस्थित पार्थिव अदि अंशों का परिपाक कर उसे शरीर में उपयोगी बनती है।

- भूताग्नि पाक का उपरान्त आहार रस के पार्थिवादि अंशो मे विलक्षण गुण उत्पन्न हो जाते हैं और सहस्र गुण वाले होने से उसकी वृद्धि के लिए सहायक होते हैं।
- भूताग्नि का स्थान धकृत को माना गया है।

#### भूताग्नि के कार्य

“भौमाप्याग्नेयवायव्या पचोष्माण सनाभसा।

पन्चाहार गुणान् स्वान् पार्थिवादीन् पचन्ति हि”।(च.चि 15 13)

- पचभूताग्नियां तथा इनके द्वारा पच पार्थिवादि आहार गुणों का परिपाक भौम आप्य आग्नेय तथा नाभस ये पक्व ऊष्मा या अपनी-अपनी आहार गुणों को पचाती है।
- इस प्रकार परिपक्व ये पाँच पार्थिवादि अहार द्रव्यों के गुण पृथक्- पृथक् अपने- अपने अनुकूल देह द्रव्य के गुणों का पोषण करते हैं । जिसके उसे शरीर उपयोगी हो जाते हैं।

- इस शरीर के उपदंशोष , धातु , मल , सभी पांच भौतिक होती है।

इसलिए शरीर के इन पार्थिव अदि वृद्धि एवं हास की उत्तरदाई भूताअग्नियों ही पर ही निर्भर हैं।

- भूताग्नि पाक के पुराहार द्रव्य शरीर के पांच भौतिक गुणों में अभ्यन्तर एवं बाइये रूप से सामान नहीं होते अर्थात् आहार द्रवियों में उपस्थित पार्थिववंश रहने पर वह संनिये सिद्धांत के अनुसार शरीर के पार्थिव द्रवियों की वृद्धि नहीं कर पता है।

#### • धात्वाग्नि

आहार का सर्वप्रथम पाचक अग्नि के द्वारा पाचन होने के पश्चात भूता अग्नि द्वारा पाचन होता है

भूता अग्नि के साथ धात्वाग्नि के द्वारा पाचन होता है

धात्वाग्नि की क्रिया अन्नरस पर होती है जिसे धातुओं का पोषण होता है

धतव अग्नि व्यपार को के अंतर्गत मन गया है जिसमें पाचने एवं [उपचाये] क्रियायें होती हैं।

आहार जठराग्नि पाक और भूताग्नि पाक के यकृत के हृदि पाचन कर शरीर में विचरण करने लगता है परन्तु धातु के में पोंछकरका धातु की वर्धि एवं श्रेय में हो जाते हैं धातु के आशुओं में परिवर्तन का कारन धतव अग्नि है

- इनकी मंदता ने तद धातुओं की वर्धि और तीक्ष्णता से धातुओं का श्रेय होता है ।
- स्रोतस द्वारा धातु पोषण होता है . इस प्रकार स्रोतस और ढटवा धतवशेय धात्वाग्नु के स्थान मन गई है ।

#### • धात्वाग्नि के कार्य

सप्तभिर्देहधातरो धातवो दिविधं पुनः।

यथास्थमाग्निभिः पाकं यान्ति किट्टप्रसादवत् ॥ च.चि. )

अर्थात् पूरा देह को धारण करने वाली रस्तादि धातुएं अपनी अपनी सत्तों अग्नियों सत्तों अग्नियों से और किट्ट के रूप में दो प्रकार से पाक को प्राप्त होती है ।

-अन्न पत्र के लिए जाठराग्नि , उसी प्रकार परिपक्व से अन्न पत्र को पचने के लिए धात्वग्निये है ।  
धातुओं का पोषण उक्त अवस्थापाक उपदान धातुओं से होता है ।  
होता है

जब प्रत्येक धातु पर धात्वग्नियो अपनी क्रिया करता है तब मल और प्रसाद का होता है ।